तीर्थंकरों के लांछन और शासन देवता

बालचन्द जैन

जैन प्रतिमा विज्ञान के अध्येता के सम्मुख निम्नलिखित दो प्रश्न अक्सर रखे जाया करते हैं, यथा

१. तीर्थंकरों के साथ उनके लांछन, वृषभ, गज आदि कब से संलग्न हुए ? और

२. उनकी प्रतिमाओं के साथ शासन देवताओं, यक्षों और यक्षियों की प्रतिमाएं कब से जोड़ी जाने लगीं ?

लांछनों का प्रारंभ

जैन मूर्तिकला के प्रारम्भिक काल में तीर्थंकर प्रतिमाओं के साथ न तो कोई चिह्न या लांछन बनाए जाते थे और न शासन देवतावृन्द ही संयुक्त किए जाते थे। इस कथन की पुष्टि मथुरा तथा अन्य स्थानों से प्राप्त हुई लगभग दो हजार वर्ष प्राचीन प्रतिमाएं करती हैं।

जैनों के प्राचीनतम सिद्धान्त ग्रन्थों एवं साहित्यिक रचनाओं में भी प्रचलित लांछनों अथवा शासन देवताओं का नामोल्लेख नहीं मिलता। प्रारम्भिक काल में विभिन्न तीर्थंकर प्रतिमाएं प्रतिष्ठा के समय उन पर लिखे गए लेख से ही पहचानी जाती थीं कि वे किस तीर्थंकर की प्रतिमा हैं। इतना अवश्य था कि ऋषभनाथ, सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ की प्रतिमाएं लेख के अभाव से भी पहचानी जा सकती थीं क्योंकि ऋषभनाथजी के कन्धों पर केशगुच्छ लहराते हुए दिखाए जाते थे और सुपार्श्वनाथ तथा पार्श्वनाथ के मस्तक पर नाग के पांच या सात फणों का छत्र सुशोभित कर दिया जाता था।

आदिपुराण, उत्तरपुराण और पद्मपुराण जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों में भी तीर्थंकरों के चिह्नों की सूची नहीं मिलती। आदि पुराण (१।१५) में प्रथम तीर्थंकर को वृषभध्वज अवश्य कहा गया है किन्तु अन्यों के संबंध में उल्लेख नहीं है। तिलोयपण्णत्ति में तीर्थंकरों के लांछनों की सूची मिलती है किन्तु अनेक विद्वानों ने उस अंश के प्रक्षिप्त एवं पश्चात्कालीन होने की शंका की है।

राजगृह के वैभारगिरि की एक गुप्तकालीन तीर्थंकर प्रतिमा को बाईसवें तीर्थंकर नेमीनाथ की प्रतिमा माना गया है क्योंकि उसके पादपीठ पर चक्रपुरुष के दोनों ओर शंख बने हुए हैं। यदि ये शंख केवल मांगलिक चिह्न न होकर नेमीनाथ की पहचान के लिये बनाये गये लांछन रूप हैं तो मानना पड़ेगा कि विभिन्न तीर्थंकरों के लांछन गुप्तकाल में प्रयुक्त किए जाने लगे थे। सीरापहाड़ी की एक आदिनाथ प्रतिमा के पादपीठ पर सिंहासन के सिंहों के स्थान पर दोनों ओर वृषभ की आकृतियां बनी हुई हैं। यह उनके वृषभासन की द्योतक है। अथवा उनके लांछन विशेष की ओर संकेत करती है। यह विचारणीय है। जो भी हो, इतना तो निश्चित ही है कि गुप्तकाल से पूर्व की तीर्थंकर प्रतिमाओं पर लांछन नहीं बनाए जाते थे और गुप्तकाल में भी सभी तीर्थंकरों के चिह्न निश्चित नहीं किए जा सके थे।

शासन देवता

वर्तमान जैन मान्यता के अनुसार प्रत्येक तीर्थंकर का एक शासन यक्ष और एक शासन यक्षिणी हुआ करती है। इन यक्ष यक्षिणी की सूचियां दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों के ग्रन्थों में मिलती हैं। यक्षों के नामों के सम्बन्ध में दोनों परम्पराओं में अधिक मतभेद नहीं है पर यक्षिणियों के नामों की जो सूचियां इन दोनों सम्प्रदायों में वर्तमान में प्रचलित हैं उनमें अधिकतम नामों के संबंध में भिन्नता है।

अधिकांश विद्वानों का मत है कि जैन मूर्तिकला में चतुर्विंशति यक्ष और उतनी ही यक्षियों की कल्पना नौवीं शताब्दी के आसपास की गई थी। श्वेताम्बर ग्रन्थों में शासनदेवताओं की संपूर्ण सूची सर्वप्रथम हेमचन्द्राचार्य के अभिधान चिन्तामणि में मिलती है और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनके स्वरूप का वर्णन उन्हीं आचार्य के त्रिषष्टि शलाका पुरुष-चरित में उपलब्ध होता है। दिगम्बरों में वसुनन्दि, आशाधर आदि विद्वानों ने यक्ष-यक्षियों के स्वरूप वर्णन प्रस्तुत किए हैं। दिगम्बर परम्परा की यक्षी प्रतिमाएं देवगढ़ और खण्डगिरि में पूर्ण समूह में प्राप्त हुई हैं। पतियानदाई के नाम से ज्ञात एक अम्बिका प्रतिमा के तीन ओर की पट्टियों में भी अन्य तेईस यक्षियों की छोटी छोटी प्रतिमाएं उकेरी हुई हैं जिनके नाम भी वहीं उत्कीर्ण हैं। आश्चर्य की बात है कि एक ही सम्प्रदाय की होने के बावजूद भी देवगढ़, खण्डगिरि और पतियानदाई की यक्षिणियों के नाम भिन्न-भिन्न हैं।

हरिवंशपुराण में तीर्थंकरों संबंधी समस्त जानकारी का विस्तृत विवरण होने पर भी वहां (सर्ग ६०) शासन देवताओं का विवरण नहीं दिया गया है। उसी पुराण के ६६ वें सर्ग के ४३ वें श्लोक में एक बार शासन देवता शब्द का प्रयोग मिलता है और आगे ४४ वें श्लोक में अप्रतिचक्रा देवता का तथा ऊर्जयन्त (पर्वत) में निवास करने वाली सिंहवाहनीदेवी का उल्लेख मिलता है, किन्तु उस सिंहवाहनी देवी को अम्बिकादेवी या आम्रादेवी नहीं कहा गया है। आदि पुराण से ज्ञात होता है कि गरुड़वाहनी और सिंहवाहनी ये दो विद्याएं थीं। संभवतः इन्हीं दोनों ने आगे चलकर अप्रतिचक्रा या चक्रेश्वरी और अम्बिका या आम्रादेवी के रूप प्राप्त कर लिए हों। अम्बिका देवी की प्रतिमाएं पर्याप्त प्राचीन काल से ही निर्मित होने लगी थीं। प्रारंभ में प्रायः सभी तीर्थंकरों की प्रतिमाओं के साथ अम्बिकादेवी की ही प्रतिमा बनाई जाती थी। अकोटा से प्राप्त हुई अम्बिकादेवी की प्रतिमा को ५५० ईसवीं के लगभग का माना जाता है।

श्रुतदेवता, विद्यादेवता और शासन देवता

पद्मपुराण (१२३।१८३) में समय देवता का उल्लेख मिलता है। हरिवंशपुराण (१।२५) का उल्लेख किया गया है। हरिवंश-पुराण (५।३६३) में यह भी उल्लेख मिलता है कि तीर्थंकरों की प्रतिमाओं के समीप चामर लिये हुए नागकुमार और यक्षों के युगल खड़े बनाये जाते थे तथा समस्त जिन प्रतिमाएं सनत्कुमार और सर्वाह्ण यक्ष तथा निवृत्ति और श्रुति नामक देवियों की मूर्तियों से युक्त हुआ करती थी।

जैन परम्परा में श्रुतदेवी या सरस्वती की पूजा बहुत प्राचीन काल से होती रही है। मथुरा में जैन सरस्वती की प्रतिमा प्राप्त हुई है जो दूसरी शताब्दी की है। सिंहसूरि के लोक विभाग नामक ग्रन्थमें (१।३७) कहा गया है कि प्रत्येक जिनबिम्ब के दोनों पार्श्व-भागों में सनत्कुमार और सर्वाह्ण यक्षों तथा श्रीदेवी और श्रुतदेवी के प्रतिबिम्ब होते हैं। सिंहसूरि का ग्रन्थ विक्रम की ग्यारहवीं शताब्दी में रचा गया था किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया है उनका ग्रन्थ सर्वनन्दी मुनि के उस ग्रन्थ का भाषान्तर है जो शक संवत् ३८० में रचा गया था।

हरिवंशपुराण में श्रुतदेवी की मूर्तियों का उल्लेख मिलता है। पद्मपुराण में "समय" देवता का उल्लेख मिलता है यह ऊपर कहा जा चुका है। "समय" शब्द का अर्थ शास्त्र या ज्ञान भी होता है। इसलिये समय देवता का संबंध श्रुतदेवता से जुड़ना स्वाभाविक है और समयको शासन काल से संबंधित कर 'समय देवता' का 'शासन देवता' के रूप में प्रचलन भी अस्वाभाविक प्रतीत नहीं होता। पश्चात्कालीन जैन ग्रन्थों में विद्यादेवियों की लम्बी सूची मिलती है। कोई आश्चर्य नहीं कि ये विद्यादेवियां या समय देवता ही यथाक्रम से शासन देवियां हो गई हों। दिगम्बर ग्रन्थों में जो शासन यक्षियों की सूची मिलती है उनमें विद्या देवियों के नाम ज्यों के त्यों मिलते हैं।

विद्यादेवियों के संबंध में हरिवंशपुराण में उल्लेख मिलता है। भगवान ऋषभदेव के महाव्रती बन चुकने के पश्चात् नमि और विनमि उनसे धन संपत्ति प्राप्त करने के लिए उन्हें परेशान कर रहे थे। तब धरण ने दिती और अदिति नामक अपनी देवियों के साथ वहां पहुंच कर नमि और विनमि को अपनी देवियों से विद्या का भण्डार दिला दिया था नमि और विनमि ने विद्याओं के आठ आठ निकाय प्राप्त किये। उन सोलह निकायों की विद्याओं की सूची हरिवंशपुराण में दी गई है। उनमें प्रज्ञप्ति, रोहिणी गौरी, महागौरो, कूष्मांडिनी, अजिता, काली, भद्रकाली आदि हैं। इसी सूची में आर्य-वती और निवृत्ति का नाम भी है कोई आश्चर्य की बात नहीं कि मथुरा से प्राप्त आर्यवती प्रतिमा भी विद्यादेवी की प्रतिमा हो।

अब तक प्राप्त जानकारी के आधार पर यह कल्पना की जा सकती है कि जैन परम्परा में शासन देवियों का आगमन विद्या-देवियों के माध्यम से हुआ। □

क्षमा अमृत है, क्रोध विष है; क्षमा मानवता का अतीव विकास करती है और क्रोध उसका सर्वथा नाश कर देता है। क्रोधावेशी में दुराचारिता, दुष्टता, अनुदारता, परपीड़कता इत्यादि दुर्गुण निवास करते हैं और वह सारी जिन्दगी चिन्ता, शोक एवं सन्ताप में घिर कर व्यतीत करता है, क्षण-भर भी शान्ति से साँस लेने का समय उसे नहीं मिलता; इसलिए क्रोध को छोड़कर क्षमा को अपना लेना चाहिये।

—राजेन्द्र सूरि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org